BA (Hons.) PART –II, Paper- III

डॉ0 गौतम कुमार

अतिथि शिक्षक

राजनीति विज्ञान विभाग

आचार्य नरेन्द्र देव महाविद्यालय, शाहपुर पटोरी, समस्तीपुर

भारत में राजनीति और भाषा : अन्तःक्रिया

राजनीतिक दलों एवं राजनीतिज्ञों ने जनता को भाषा के आधार पर उत्तेजित करने का प्रयास किया है। कभी–कभी ऐसा भी लगता है कि भाषा कहीं राष्ट्रीय एकता को खण्डित भी न कर दे। भारतीय राजनीति में भाषा से जुड़ी राजनीतिक समस्याएँ निम्न प्रकार है :–

1. **हिन्दी के विरोध की राजनीति** – बंगला एवं तमिलभाषी सदस्य क्रमशः सुनीति कुमार चटर्जी एवं डॉ0 पी. सुब्बानारायण का दृष्टिकोण था कि अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को प्रतिस्थापित करने में जल्दी करने का परिणाम "अहिन्दी भाषी जनता पर हिन्दी थोपना" होगा। जिससे सार्वजनिक जीवन अस्त–व्यस्त हो जायेगा। इन लोगों का मत था कि जब तक सरकारी भाषा अर्थात् हिन्दी पूर्णतः विकसित नहीं हो जाती, अंग्रेजी भाषा प्रयुक्त होती रहे।
2. **भाषायी राज्यों के विवाद** – भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन करने से राज्यों में राजनीतिक विवाद भी हुए हैं। महाराष्ट्र और कर्नाटक की सीमा पर बलगॉव एवं अन्य क्षेत्रों में भी विवाद हुआ। बेलगॉव नगर में मराठी भाषा के लोगों की संख्या अधिक होने के कारण महाराष्ट्र सरकार अपना अधिकार जमाना चाहती थी, ठीक इसके विपरीत कर्नाटक सरकार का दावा था कि इस नगर में सभी भाषाओं और जातियों के लोग रहते हैं जिसके कारण मराठी भाषा का बहुमत समाप्त हो गया है। बेलगॉव तालुके का मुख्य केन्द्र है इसलिए प्रशासनिक दृष्टि से इसे कर्नाटक में ही रहने दिया जाय। इसी तरह वर्ष 1972 में बंगाली एवं असमी भाषा को लेकर विवाद हुआ था।

3. **भाषायी आधारों पर राज्यों का पुनर्गठन** – भारत में भाषावार राज्यों के गठन की समस्या काफी गंभीर रही है। आजादी के कुछ समय बाद से ही भारतीय राजनीतिज्ञों द्वारा भारत के राज्यों के बीच की सीमाएँ, भाषा के आधार पर बनाने के लिए राजनीतिक दबाब देने लगी। वर्ष 1952 में तेलुगु भाषी लोगों ने भाषा के आधार पर एक अलग राज्य बनाने के लिए आमरण अनशन का तरीका अपनाया। इसी बीच अनशनकर्ता की मृत्यु हो जाने के कारण इस पर काफी हंगामा होने लगा, जिसके कारण नेहरू जी को भाषा के आधार पर राज्य का निर्माण करने के लिए झुकना पड़ा। उसके बाद देश के विभिन्न भागों से भाषा के आधार पर राज्यों के निर्माण की मॉग उठने लगी। इन मॉगों की जॉच पड़ताल करने और नए राज्यों की सीमाएँ निर्धारित करने के लिए राज्य पुनर्गठन आयोग का गठन किया गया। वर्ष 1960 में गुजरात और महाराष्ट्र तथा 1966 में पंजाब और हरियाणा को भाषा के आधार पर विभाजित करना पड़ा। देश के विभिन्न प्रान्तों में भाषा के आधार पर राज्यों के गठन की मॉग समय–समय पर उठती रही है तथा भाषा के आधार पर राज्यों के गठन के लिए आन्दोलन भी चलाया जाता है। जैसे – मिथिलाचंल के अलग राज्य की मॉग।
4. **भाषा के आधार पर राजनीति में नए दबाब गुटों का उदय** – भारतीय राजनीति में भाषागत दबाब गुटों का उदय हुआ। उदहारणार्थ – भाषा के आधार पर महाराष्ट्र के लोगों ने संयुक्त महाराष्ट्र समिति तथा गुजरात के लोगों ने महागुजरात जनता परिषद् बनाया। इन संगठनों में शुरू में वामपंथी लोग थे लेकिन बाद में गैर राजनीतिक लोगों का भी समर्थन प्राप्त हो गया।
5. **भाषायी आधार पर राजनीतिक आन्दोलन** – सरकार की भाषा नीति से हिन्दी के समर्थकों एवं विरोधियों में बड़ा रोष फैला। पहले भारत के उत्तरी राज्यों यथा– उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान में अंग्रेजी विरोधी प्रदर्शन एवं आन्दोलन हुए। वर्ष 1967 में मद्रास में हिन्दी विरोधी आन्दोलन आरम्भ हुए जो श्रीघ ही आन्ध्र और कर्नाटक तक पहुॅच गये।
6. **अन्य भाषाओं की मान्यता का प्रश्न** – भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में देश की 14 प्रमुख भाषाओं की मान्यता प्रदान की गई है। बाद में डोगरी, मैथिली, संथाली, को भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में प्रादेशिक भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की

गई है। अभी भी देश के विभिन्न क्षेत्रों से क्षेत्रीय भाषा के मान्यता की आवाज उठती रहती है। समय–समय पर क्षेत्रीय भाषा के आधार पर प्रान्तों के निर्माण की बात भी की जाती है।

7. **उर्दू भाषा के सवाल पर चुनावी मसला बनाना** – राजनीतिक दल उर्दू भाषा के सवाल को चुनावी रूप देने में पीछे नहीं आते हैं। अल्पसंख्यक मुस्लिम मतदाताओं को प्रभावित करने के उद्वेश्य से कांग्रेस(आई) ने वर्ष 1980 में अपने चनावी घोषणा पत्र के माध्यम से यह आश्वासन दिया था कि, "उर्दू भाषा को उसके ऐतिहासिक, सामाजिक महत्व के अनुरूप उचित स्थान दिलाया जायेगा..... उर्दू को कुछ राज्यों में खास–खास क्षेत्रों में सरकारी कामकाज में व्यवहार के लिए दूसरी भाषा के रूप में मान्यता दी जायेगी।" जनवरी 1980 के चुनावों के पूर्व उत्तरप्रदेश की लोकदल सरकार ने तीसरी भाषा के रूप में स्कूलों में उर्दू को पढ़ाया जाना अनिवार्य कर दिया था। वोट बैंक की राजनीति के कारण कुछ दलों के द्वारा यह भी कहा गया कि उर्दू हमारे स्वतंत्रता संग्राम की भाषा रही है।
8. **सर्वमान्य शिक्षा नीति के निर्माण में कठिनाईया** – भाषा संबंधी समस्याओं के कारण ही आज तक हमलोग ऐसी शिक्षा नीति का निर्माण नहीं कर सके, जिसे हम अपना कह सके। माध्यमिक और उच्च शिक्षा के बारे में शिक्षाशास्त्रिों और राजनीतिज्ञों के बीच बराबर बहस होती रहती है। विवादों के कारण सरकार तीन भाषा फार्मूले तक पहुॅची। इसका मतलब यह था कि अहिन्दी भाषा क्षेत्रों में माध्यमिक शिक्षा के किसी स्तर पर क्षेत्रीय भाषा के अलावा कोई अन्य भारतीय भाषा पढ़ायी जायेगी। इस प्रकार दो भाषाएॅ हो जायेगी। तीसरी भाषा अंगेजी होगी। आज भी देश के विभिन्न भागों में भाषाओं में एकरूपता नहीं आयी हैं।
9. **स्थानीयता की संकीर्ण भावना का उदय** – भाषागत राजनीति के परिणामस्वरूप ही "धरती के पुत्रों को ही" अर्थात् केवल उन्हीं लोगों को जो प्रादेशिक भाषा बोलते हैं, सरकारी व गैर–सरकारी पदों पर नियुक्त कर देना चाहिए, की धारणा प्रचलित हुई। महाराष्ट्र में शिवसेना ने केरल एवं कर्नाटक वासियों के साथ स्थानीय भाषा के कारण ही उपद्रव किया था क्योंकि केरल की भाषा मलयालम तथा कर्नाटक की भाषा कन्नड़ थी।